मैक्समूलर

विश्वविख्यात विद्वान फ्रेड्रिक मैक्समूलर का जन्म आधुनिक जर्मनी के डेसाउ नामक नगर में 6 दिसंबर 1823 ई० में हुआ था । जब मैक्समूलर चार वर्ष के हुए, उनके पिता विल्हेल्म मूलर नहीं रहे । पिता के निधन के बाद उनके परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत ही दयनीय हो गई, फिर भी मैक्समूलर की शिक्षा-दीक्षा बाधित नहीं हुई । बचपन में ही वे संगीत के अतिरिक्त ग्रीक और लैटिन भाषा में निपुण हो गये थे तथा लैटिन में कविताएँ भी लिखने लगे थे । 18 वर्ष की उम्र में लिपजिंग विश्वविद्यालय में उन्होंने संस्कृत का अध्ययन आरंभ कर दिया । उन्होंने 'हितोपदेश' का जर्मन भाषा में अनुवाद प्रकाशित करवाया । इसी समय उन्होंने 'कठ' और 'केन' आदि उपनिषदों का जर्मन भाषा में अनुवाद किया तथा 'मेघदूत' का जर्मन पद्यानुवाद भी किया ।

मैक्समूलर उन थोड़े-से पाश्चात्य विद्वानों में अग्रणी माने जाते हैं जिन्होंने वैदिक तत्त्वज्ञान को मानव सभ्यता का मूल स्रोत माना । स्वामी विवेकानंद ने उन्हें 'वेदांतियों का भी वेदांती' कहा । उनका भारत के प्रति अनुराग जगजाहिर है । उन्होंने भारतवासियों के पूर्वजों की चिंतनराशि को यथार्थ रूप में लोगों के सामने प्रकट किया । उनके प्रकाण्ड पाँडित्य से प्रभावित होकर साम्राज्ञी विक्टोरिया ने 1868 ई० में उन्हें अपने ऑस्बोर्न प्रासाद में ऋग्वेद तथा संस्कृत के साथ यूरोपियन भाषाओं की तुलना आदि विषयों पर व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया था । उस भाषण को सुनकर विक्टोरिया इतनी प्रभावित हुई कि उन्हें 'नाइट' की उपाधि प्रदान कर दी, किन्तु उन्हें यह पदवी अत्यंत तुच्छ लगी और उन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया । भारतभक्त, संस्कृतानुरागी एवं वेदों के प्रति अगाध आस्था रखने वाले फ्रेड्रिक मैक्समूलर का 28 अक्तूबर सन् 1900 ई० में निधन हो गया ।

प्रस्तुत आलेख वस्तुत: भारतीय सिविल सेवा हेतु चयनित युवा अंग्रेज अधिकारियों के आगमन के अवसर पर संबोधित भाषणों की शृंखला की एक कड़ी है । प्रथम भाषण का यह अविकल रूप से संक्षिप्त एवं संपादित अंश है जिसका भाषांतरण डॉ० भवानीशंकर त्रिवेदी ने किया है । भाषण में मैक्समूलर ने भारत की प्राचीनता और विलक्षणता का प्रतिपादन करते हुए नवागंतुक अधिकारियों को यह बताया कि विश्व की सभ्यता भारत से बहुत कुछ सीखती और ग्रहण करती आयी है । उनके लिए भी यह एक सौभाग्यपूर्ण अवसर है कि वे इस विलक्षण देश और उसकी सभ्यता-संस्कृति से बहुत कुछ सीख-जान सकते हैं । यह भाषण आज भी उतना ही प्रासंगिक है, बल्कि स्वदेशाभिमान के विलोपन के इस दौर में इस भाषण की विशेष सार्थकता है । नई पीढ़ी अपने देश तथा इसकी प्राचीन सभ्यता-संस्कृति, ज्ञान-साधना, प्राकृतिक वैभव आदि की महत्ता का प्रामाणिक ज्ञान प्रस्तुत भाषण से प्राप्त कर सकेगी ।

भारत से हम क्या सीखें

सर्वविध सम्पदा और प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण कौन-सा देश है, यदि आप मुझे इस भूमण्डल का अवलोकन करने के लिए कहें तो बताऊँगा कि वह देश है - भारत । भारत, जहाँ भूतल पर ही स्वर्ग की छटा निखर रही है । यदि आप यह जानना चाहें कि मानव मस्तिष्क की उत्कृष्टतम उपलब्धियों का सर्वप्रथम साक्षात्कार किस देश ने किया है और किसने जीवन की सबसे बड़ी समस्याओं पर विचार कर उनमें से कइयों के ऐसे समाधान ढूँढ़ निकाले हैं कि प्लेटो और काण्ट जैसे दार्शनिकों का अध्ययन करनेवाले हम यूरोपियन लोगों के लिए भी वे मनन के योग्य हैं, तो मैं यहाँ भी भारत ही का नाम लूँगा । और यदि यूनानी, रोमन और सेमेटिक जाति के यहूदियों की विचारधारा में ही सदा अवगाहन करते रहनेवाले हम यूरोपियनों को ऐसा कौन-सा साहित्य पढ़ना चाहिए जिससे हमारे जीवन का अंतरतम परिपूर्ण, अधिक सर्वांगीण, अधिक विश्वव्यापी, यूँ कहें कि सम्पूर्णतया मानवीय बन जाये, और यह जीवन ही क्यों, अगला जन्म तथा शाश्वत जीवन भी सुधर जाये, तो मैं एक बार फिर भारत ही का नाम लूँगा ।

जो लोग आजकल के भारत में घूमकर आये हैं, उन लोगों को अधिकतर भारत के कलकत्ता, बम्बई, मद्रास या ऐसे दूसरे शहरों की ही याद है, जबकि मेरा अधिकतर ध्यान सच्चे अर्थों में भारत के नागरिक-ग्रामवासियों की ओर ही रहा है, क्योंकि सच्चे भारत के दर्शन वहीं हो सकते हैं ।

दो-तीन हजार वर्ष पुराना ही क्यों, आज का भारत भी ऐसी अनेक समस्याओं से भरपूर है जिनका समाधान उन्नीसवीं सदी के हम यूरोपियन लोगों के लिए भी उतना ही वांछनीय है, केवल हमारे पास उस भारत को पहचान सकनेवाली दृष्टि की आवश्यकता है ।

यदि आपकी अभिरुचि की पैठ किसी विशेष क्षेत्र में है, तो उसके विकास और पोषण के लिए आपको भारत में पर्याप्त अवसर मिलेगा । यदि आपने उन बड़ी-बड़ी समस्याओं में रुचि ली हो, जिनके बारे में अपने यहाँ के श्रेष्ठतम विचारक सोच-विचार किया करते हैं, तो आपको अपने भारत प्रवास को ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र से निर्वासन समझ लेने की कोई आवश्यकता नहीं ।

यदि आप भू-विज्ञान में रुचि रखते हैं तो हिमालय से श्रीलंका तक का विशाल भू-प्रदेश आपकी प्रतीक्षा कर रहा है ।

यदि आप वनस्पति जगत में विचरना चाहते हैं तो भारत एक ऐसी फुलवारी है जो हकर्स जैसे अनेक वनस्पति वैज्ञानिकों को अनायास ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है ।

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

यदि आपकी रुचि जीव-जन्तुओं के अध्ययन में है तो आपका ध्यान श्री हेकल की ओर अवश्य होगा, जो इन दिनों भारत के कान्तारों की छानबीन के साथ ही भारतीय समुद्रतट से मोती भी बीन रहे हैं । भारत का यह निवास काल उनके जीवन के सबसे सुनहले सपने की साकारता जैसा है ।

यदि आप नृवंश विद्या में अभिरुचि रखते हैं तो भारत आपको एक जीता-जागता संग्रहालय ही लगेगा ।

यदि आप पुरातत्त्व प्रेमी हैं, और यदि आपने वहाँ रहते हुए पुरातत्त्व के उत्खनन के द्वारा एक प्राचीन चाकू या चकमक या किसी प्राणी का कोई भाग ढूँढ निकालने के आनन्द का अनुभव किया हो तो आपको जनरल कनिंघम की भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण की वार्षिक रिपोर्ट पढ़ लेनी चाहिए और तब भारत के बौद्ध सम्राटों के द्वारा निर्मित (नालन्दा जैसे) विश्वविद्यालयों अथवा विहारों के ध्वंसावशेषों को खोद निकालने के लिए आपका फावड़ा आतुर हो उठेगा ।

यदि आपके मन में पुराने सिक्कों के लिए लगाव है, तो भारतभूमि में ईरानी, कैरियन, थ्रेसियन, पार्थियन, कुषाणी, मेकेडोनियन, शकों, रोमन और मुस्लिम शासकों के सिक्के प्रचुर परिमाण में उपलब्ध होंगे । जब वारेन हेस्टिंग्स भारत का गवर्नर जनरल था तो वाराणसी के पास उसे 172 दारिस नामक सोने के सिक्कों से भरा एक घड़ा मिला था । वारेन हेस्टिंग्स ने अपने मालिक ईस्ट इण्डिया कम्पनी के निदेशक मंडल की सेवा में सोने के सिक्के यह समझकर भिजवा दिये कि यह एक ऐसा उपहार होगा जिसकी गणना उसके द्वारा प्रेषित सर्वोत्तम दुर्लभ वस्तुओं में की जाएगी और इस प्रकार वह स्वयं को अपने मालिकों की दृष्टि में एक महान उदार व्यक्ति प्रमाणित कर देगा । किन्तु उन दुर्लभ प्राचीन स्वर्ण मुद्राओं की यही नियति थी कि कम्पनी के निदेशक उनका ऐतिहासिक महत्त्व समझ ही न पाए और उन्होंने उन मुद्राओं को गला डाला । जब वारेन हेस्टिंग्स इंग्लैंड लौटा तो वे स्वर्ण मुद्राएँ नष्ट हो चुकी थीं । अब यह आप लोगों पर निर्भर करता है कि आप ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएँ भविष्य में कभी न होने दें ।

दैवत विज्ञान पर भारत के प्राचीन वैदिक दैवत विज्ञान के कारण जो नया प्रकाश पड़ा है, उसके फलस्वरूप सम्पूर्ण दैवत विज्ञान को नया स्वरूप प्राप्त हो गया है । किन्तु बावजूद इसके कि सच्चे दैवत विज्ञान की एक आधारशिला रखी जा चुकी है, इस विज्ञान की व्यापक रूपरेखाएँ अभी निर्मित होनी हैं और यह कार्य जितने सही ढंग से भारत में हो सकता है, अन्यत्र कहीं नहीं ।

नीति कथाओं के अध्ययन क्षेत्र में भी भारत के कारण नवजीवन का संचार हो चुका है, क्योंकि भारत के कारण ही समय-समय पर नानाविध साधनों और मार्गों के द्वारा अनेक नीति कथाएँ पूर्व से पश्चिम की ओर आती रही हैं । हमारे यहाँ प्रचलित कहावतों और दंतकथाओं का प्रमुख स्रोत अब बौद्ध धर्म को माना जाने लगा है । किन्तु यहाँ भी अनेक समस्याएँ ऐसी हैं, जो अपने समाधान की प्रतीक्षा कर रही हैं । उदाहरण के लिए 'शेर की खाल में गधा' की कहावत को ही ले लीजिए । यह कहावत सबसे पहले यूनान के प्रसिद्ध एवं प्राचीनतम दार्शनिक प्लेटो के

क्रटिलस में मिलती है । तो क्या यह कहावत पूर्व से उधार ली गई थी, और इसी प्रकार हम न्यौले या चूहे से सम्बद्ध उस नीति कथा को भी ले सकते हैं जिसे एफ्रोडाइट ने एक सुन्दरी के रूप में परिवर्तित कर दिया था किन्तु जो एक चूहे को देखते ही तत्काल उसकी ओर आकृष्ट हो गयी थी । यह भी संस्कृत की एक कथा से सर्वांश में मिलती-जुलती एक कहानी है । किन्तु प्रश्न यह उपस्थित होता है कि यह कहानी यूनान में कैसे पहुँची और वहाँ ईसा पूर्व चौथी सदी में ही स्ट्रटिस की कहानियों में स्थान कैसे पा गयी ? इस क्षेत्र में भी अभी बहुत काम करना होगा ।

हमें इससे भी और अधिक प्रस्तयुग में प्रवेश करना होगा । वहाँ भी भारत तथा पश्चिम की अनेक दन्तकथाओं में आश्चर्यजनक अनुरूपताएँ मिलेंगी । यद्यपि अभी यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि ये दन्तकथाएँ पूर्व से पश्चिम को अथवा पश्चिम से पूर्व को गयीं, तथापि यह असंदिग्ध रूप से प्रमाणित हो चुका है कि सोलोमन के समय में ही भारत, सीरिया और फिलीस्तीन के मध्य आवागमन के साधन सुलभ हो चुके थे । कुछ संस्कृत शब्दों के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि हाथी-दाँत, बन्दर, मोर और चन्दन आदि जिन वस्तुओं के ओफिर से निर्यात की बात बाइबल में कही गयी है, वे वस्तुएँ भारत के सिवा किसी अन्य देश से नहीं लाई जा सकतीं । और यह मान लेने का भी कोई कारण नहीं प्रतीत होता कि भारत तथा फारस की खाड़ी और लाल सागर व भूमध्य सागर के बीच व्यापारिक सम्बन्ध कभी बिलकुल ठप्प हो गया था । यहाँ तक कि 'शाहनामा' के रचनाकाल (दसवीं-ग्यारहवीं सदी) में भी (भारत के साथ यूरोप के ये व्यापारिक सम्बन्ध) बन्द नहीं हुए थे ।

आपमें से कइयों ने भाषाओं का ही नहीं, भाषाविज्ञान का भी अध्ययन किया होगा । तो आपको क्या भारत से बढ़कर दूसरा कोई देश दिखाई देता है जहाँ केवल शब्दों का ही नहीं, बल्कि व्याकरणात्मक तत्त्वों के विकास और क्षय से सम्बद्ध भाषावैज्ञानिक समस्याओं के अध्ययन का महत्त्वपूर्ण अवसर प्राप्त हो सके ? वहाँ आपको आर्य, द्रविड़ और मुण्डा जैसी अनेक भारतवासी जातियों की बोलचाल की भाषाओं का ही नहीं, अपितु उनके साथ यूनानी, शूची-हूण-अरब, ईरानी और मुगल आक्रमणकारियों व विजेताओं की भाषाओं के सम्मिश्रण की अत्यन्त रोचक भाषावैज्ञानिक समस्याओं के अध्ययन का भी सुयोग प्राप्त हो सकता है ।

यदि आप विधिशास्त्र या कानून के विद्यार्थी हैं तो आपको विधि-संहिताओं के एक ऐसे इतिहास की जाँच-पड़ताल का अवसर मिलेगा जो यूनान, रोम या जर्मनी के ज्ञात विधिशास्त्रों के इतिहास से सर्वथा भिन्न होते हुए भी इनके साथ समानताओं और विभिन्नताओं के कारण विधिशास्त्र के किसी भी विद्यार्थी के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है । उदाहरण के लिए हम धर्मसूत्रों या समयाचारिक सूत्रों को ही ले लें । ये धर्मसूत्र मानवधर्मशास्त्र जैसे परवर्ती विधिग्रन्थों की आधारभूत सामग्री उपलब्ध कराते हैं ।

यदि आप लोगों को अत्यंत सरल राजनैतिक इकाइयों के निर्माण और विकास से सम्बद्ध प्राचीन युग के कानून के पुरातन रूपों के बारे में इधर जो अनुसंधान हुए हैं, उनके महत्त्व और

वैशिष्ट्य को परख सकने की क्षमता प्राप्त करनी है, तो आपको इसके लिए आज भारत की ग्राम पंचायतों के रूप में इसके प्रत्यक्ष दर्शन का सुयोग अनायास ही मिल जाएगा। भारत में प्राचीन स्थानीय शासन प्रणाली या पंचायत प्रथा को समझने-समझाने का बहुत बड़ा क्षेत्र विद्यमान है।

भारत में धर्म के वास्तविक उद्भव, उसके प्राकृतिक विकास तथा उसके अपरिहार्य क्षीयमाण रूप का प्रत्यक्ष परिचय मिल सकता है। भारत ब्राह्मण या वैदिक धर्म की भूमि है, बौद्ध धर्म की यह जन्मभूमि है, पारसियों के जरथुस्त्र धर्म की यह शरणस्थली है। आज भी यहाँ नित्य नये मत-मतान्तर प्रकट व विकसित होते रहते हैं।

भारत में आप अपने-आपको सर्वत्र अत्यन्त प्राचीन और सुदूर भविष्य के बीच खड़ा पायेंगे। वहाँ आपको ऐसे सुअवसर भी मिलेंगे जो किसी पुरातन विश्व में ही सुलभ हो सकते हैं। आप आज की किसी भी ज्वलंत समस्या को ले लीजिए। वह समस्या चाहे लोकप्रिय शिक्षा से सम्बद्ध हो, या उच्च शिक्षा, चाहे संसद में प्रतिनिधित्व की बात हो अथवा कानून बनाने की बात हो, चाहे प्रवास सम्बन्धी कानून हो अथवा अन्य कोई कानूनी मसला, सीखने या सिखाने योग्य कोई बात क्यों न हो, भारत के रूप में आपको ऐसी प्रयोगशाला मिलेगी जैसी विश्व में अन्यत्र कहीं नहीं मिल सकती। संस्कृत भाषा के द्वारा आपको चिन्तन की ऐसी गम्भीर धारा में अवगाहन का अवसर मिलेगा जो अभी तक आपके लिए अज्ञात थी। यहाँ आपको मानव हृदय की गहनतम सहानुभूति और सदाशयता को जगानेवाले पाठ भी प्रचुर परिमाण में पढ़ने को मिल सकते हैं।

मानव मस्तिष्क के इतिहास के उस अध्ययन में, या यूँ कहें कि हमारे अपने स्वरूप के अध्ययन में, अपने सच्चे आत्मरूप की पहचान में भारत का स्थान किसी भी देश के बाद (दूसरे नम्बर पर) नहीं रखा जा सकता। मानव मस्तिष्क के चाहे किसी भी क्षेत्र को आप अपने विशिष्ट अध्ययन का विषय क्यों न बना लें, चाहे वह भाषा का क्षेत्र हो या धर्म का, दैवत विज्ञान का हो या दर्शन का, चाहे विधिशास्त्र या कानून का हो अथवा रीति-रिवाजों व परम्पराओं का, प्राचीन कला या शिल्प का हो अथवा पुरातन विज्ञान का, इनमें से प्रत्येक क्षेत्र में विचरण करने के लिए भले ही आप चाहें या न चाहें आपको भारत की शरण लेनी ही होगी, क्योंकि मानव इतिहास से सम्बद्ध अत्यन्त बहुमूल्य और अत्यन्त उपादेय प्रामाणिक सामग्री का एक बहुत बड़ा भाग भारत और केवल भारत में ही संचित है।

यदि आप भारत के इतिहास के किसी एक अध्याय का भी सम्यक् अध्ययन, व्याख्या-विवेचन कर लें तो आप पायेंगे कि हमारे स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ाए जानेवाले इतिहासों के सब अध्याय मिलकर एक क्षण के लिए भी उसकी बराबरी नहीं कर सकते।

मैं अभी आज के भारतीय साहित्य की चर्चा करना नहीं चाहूँगा, किन्तु भारत की उस अत्यधिक प्राचीन भाषा की चर्चा करूँगा जिसका नाम है संस्कृत। अब आप पूछेंगे कि संस्कृत में ऐसी क्या बात है जिसके कारण हम उस पर इतना ध्यान दें तथा ऐतिहासिक दृष्टिकोण से संस्कृत सर्वातिशायी क्यों है?

संस्कृत की सबसे पहली विशेषता है इसकी प्राचीनता, क्योंकि हम जानते हैं कि ग्रीक भाषा से भी संस्कृत का काल पुराना है। जिस रूप में आज यह हम तक पहुँची है, उसमें भी अत्यन्त प्राचीन तत्त्व भली-भाँति सुरक्षित है। ग्रीक और लैटिन भाषाएँ लोगों को सदियों से ज्ञात हैं और निस्संदेह यह भी अनुभव किया जाता रहा था कि इन दोनों भाषाओं में कुछ-न-कुछ साम्य अवश्य है। किन्तु समस्या यह थी कि इन दोनों भाषाओं मे विद्यमान समानता को व्यक्त कैसे किया जाए ? कभी ऐसा होता था कि किसी ग्रीक शब्द की निर्माण प्रक्रिया में लैटिन को कुंजी मान लिया जाता था और कभी किसी लैटिन शब्द के रहस्यों को खोलने के लिए ग्रीक का सहारा लेना पड़ता था। उसके बाद जब गॉथिक और एंग्लो-सैक्सन जैसी ट्यूटानिक भाषाओं, पुरानी कैल्टिक तथा स्लाव भाषाओं का भी अध्ययन किया जाने लगा तो इन भाषाओं में किसी-न-किसी प्रकार का पारिवारिक सम्बन्ध स्वीकार करना ही पड़ा। किन्तु इन भाषाओं में इतनी अधिक समानता कैसे आ गई, और समानताओं के साथ ही साथ इतना अधिक अन्तर भी इनमें कैसे पड़ गया, यह रहस्य बना ही रहा और इसी कारण ऐसे अनेक अहेतुकवाद उठ खड़े हुए जो भाषाविज्ञान के मूल सिद्धान्तों के सर्वथा विपरीत हैं। किंतु ज्यूँ ही इन भाषाओं के बीच में संस्कृत आ बैठी कि तत्काल लोगों को एक सही प्रकाश और गर्मी का अहसास होने लगा, और इसी से भाषाओं का पारस्परिक सम्बन्ध भी स्पष्ट हो गया। निश्चित ही संस्कृत इन सब भाषाओं की अग्रजा है। उससे हमें ऐसी बहुत-सी बातें ज्ञात हो सकीं जो इस परिवार की किसी अन्य भाषा में सर्वथा भुला दी गई थीं।

यदि आग के लिए संस्कृत का अग्नि और लैटिन का इग्निस एक ही शब्द मिल जाता है तो हम निर्भ्रान्त रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँच जाते हैं कि एक-दूसरे से अविभक्त आर्यों को अग्नि का ज्ञान हो चुका था। साथ ही लिथ्वानियन 'उग्निस' और स्कोटिक भाषा के 'इंग्ले' शब्द यह दर्शाते हैं कि स्लाव या ट्यूटानिक भाषाएँ भी इस शब्द से परिचित थीं, भले ही वहाँ कालान्तर में अग्नि के लिए दूसरे शब्द भी क्यों न गढ़ लिए गए हों।

दूसरी वस्तुओं के समान शब्द भी मर-मिट जाते हैं और यह बता पाना सरल नहीं है कि कोई शब्द किसी एक भूभाग में क्यों और कैसे पनपता रहता है जबकि दूसरे क्षेत्र में वही शब्द मुरझाकर सर्वथा लुप्त हो जाता है।

कल्पना कीजिए कि यदि हम यह जानना चाहें कि आर्य लोग अनेक शाखाओं में विभक्त होने से पूर्व चूहे के बारे में जानते थे या नहीं, तो हमें आर्य भाषाओं के शब्दकोश देखने होंगे। वहाँ हम पायेंगे कि संस्कृत में इसे मूषः, ग्रीक में मूस, लैटिन में मुस, पुरानी स्लावोनिक में माइस और पुरानी उच्च जर्मन में मुस कहते हैं। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि उस प्राचीन युग में, जिसकी काल-गणना हम अपने नहीं अपितु भारत के तिथिक्रम के आधार पर ही कर सकते हैं, चूहा ज्ञात था और उसका मूष नाम भी रख दिया गया था, ताकि किसी अन्य कीट-पतंग के साथ इसकी पहचान में कहीं कोई घपला न हो जाए।

इस प्रकार पुराने पत्थरों या काँच के टुकड़ों को जोड़-जोड़कर बनाये गये पच्चीकारी के

चित्र की भाँति आर्यों के विभाजन से पूर्व की सभ्यता व सांस्कृतिक अवस्था का कुछ कमोबेश एक परिपूर्ण चित्र बनाया जा सकता है और बनाया जा चुका है ।

इतना ही क्यों, भारत व यूनान, इटली और जर्मनी में बिखरे पड़े अवशेषों के आधार पर आर्यों की जिस मूल भाषा का ढाँचा खड़ा किया गया है, वह भी उन लोगों की अत्यन्त दीर्घकालीन चिन्तन-प्रक्रिया की ही उपलब्धि थी ।

अब आप ही अन्दाजा लगाइए कि संस्कृत, ग्रीक और लैटिन इन तीनों भाषाओं के एक सामान्य मूल उद्गम-स्रोत तक पहुँचने के लिए हमें कितना पीछे हटना होगा । इस प्रकार हम उस सम्मिलन स्थल पर पहुँच जाएँगे जहाँ से हिन्दू, ग्रीक, यूनानी आदि शक्तिशाली जातियाँ एक-दूसरी से पृथक हुई थीं और यह भी कि उस सुदूर अतीत में भी वह हमारी आदि आर्य भाषा एक ऐसी चट्टान के रूप में दिखाई देती है, जो चिन्तन-परम्परा के प्रवाहों के उतार-चढ़ाव से घिस-माँजकर चिकनी और स्पष्ट हो चुकी थी । हमें उस भाषा में प्रकृति और प्रत्यय के योग से बनी हुई अस्मि, ग्रीक एस्मि, जैसी यौगिक क्रियाएँ मिलती हैं । 'मैं हूँ' जैसे भाव को व्यक्त करने के लिए भला किन्हीं दूसरी भाषाओं में 'अस्मि' जैसा शुद्ध और उपयुक्त शब्द कहाँ मिल पाएगा ! उन भाषाओं में खड़ा होता हूँ, या ठहरता हूँ, मैं जीता हूँ, मैं उगता या उत्पन्न होता हूँ, या मैं बदलता हूँ जैसी क्रियाएँ भले ही मिल जायें किन्तु 'अस्मि' (मैं हूँ) यह क्रिया तो केवल आर्य भाषाओं में ही उपलब्ध हो सकती है ।

मैं इसे ही वास्तविक अर्थों में इतिहास मानता हूँ और यह एक ऐसा इतिहास है जो राज्यों के दुराचारों और अनेक जातियों की क्रूरताओं की अपेक्षा कहीं अधिक ज्ञातव्य और पठनीय है ।

एक भाषा बोलना एक (माँ के) दूध पीने से भी बढ़कर एकात्मकता का परिचायक है और भारत की पुरातन भाषा संस्कृत सारभूत रूप से वही है जो ग्रीक, लैटिन या एंग्लो सेक्सन भाषाएँ हैं । यह एक ऐसा पाठ है, जिसे हम भारतीय भाषा और साहित्य के अध्ययन के बिना कभी न पढ़ पाते, और भारत यदि हमें इस एक ही पाठ के सिवा और कुछ भी न पढ़ा पाता तो भी हम इससे ही इतना कुछ सीख जाते जितना दूसरी कोई भी भाषा कभी न सिखा पाती ।

संस्कृत भाषा और उसका साहित्य – याद रहे कि यह साहित्य तीन हजार से भी अधिक लम्बे काल तक फैला हुआ है और यूनान व रोम के सम्पूर्ण साहित्य से भी कहीं अधिक विशाल है । मुझे उस एक दिन की भी याद है जब इतनी गर्मी थी कि किसी काम में मन ही नहीं लग रहा था । तभी एक सान्ध्य कक्षा में हमारे एक मास्टर (डॉ० क्ली) ने बताया कि भारत में एक ऐसी भाषा बोली जाती थी जो ग्रीक और लैटिन के ही क्यों जर्मन और रूसी के भी सर्वथा समान थी । यह सुनकर पहले तो हम लोगों ने सोचा कि मास्टर साहब शायद आज हल्के-फुल्के मूड में हैं और कुछ मजाकिया बातें कर रहे हैं । किन्तु मास्टर साहब ने तो तत्काल संस्कृत, ग्रीक और लैटिन के संख्यावाचक शब्द, सर्वनाम और समान धातुरूप श्यामपट्ट पर लिख दिखाए । अब तो हमारे सामने ऐसे तथ्य उपस्थित थे जिनके आगे नतमस्तक होना ही पड़ा ।

भारत के बारे में एक प्रकार के सुनिश्चित ज्ञान को मैं अपने व्यापक तथा इतिहास के ज्ञान के लिए आवश्यक मानता हूँ। भारत के साथ हमारे परिचय के फलस्वरूप आज यूरोपवासियों की धारणाएँ बदल चुकी हैं और बहुत विस्तृत हो गयी हैं। अब हम यह जानने लगे हैं कि जैसा पहले समझा जाता था, वास्तव में हम उससे कुछ भिन्न हैं। कल्पना कीजिए कि किसी छोटी-छोटी प्रलय या भौगोलिक उथल-पुथल के कारण कभी अमेरिका के लोग अपने आपको अंग्रेजी मूल को सर्वथा भूल जाएँ और तब दो-तीन हजार वर्ष बाद उन्हें अकस्मात् मालूम हो जाए कि सत्रहवीं सदी में ऐसी ही अंग्रेजी भाषा और उसका साहित्य विद्यमान था, तो वे आश्चर्याभिभूत होंगे। संस्कृत की खोज से हमारे लिए आज ठीक वैसी ही स्थिति उत्पन्न हो गई है। इसके कारण हमारी ऐतिहासिक चेतना में एक नया अध्याय जुड़ गया है और हमारे भूले-बिसरे बचपन की मधुर स्मृतियाँ फिर से साकार हो उठी हैं।

संस्कृत तथा दूसरी आर्य भाषाओं के अध्ययन ने हमारे लिए बस इतना ही किया हो, सो बात भी नहीं है। इससे मानव जाति के बारे में हमारे विचार व्यापक और उदार ही नहीं बने हैं तथा लाखों-करोड़ों अजनबियों तथा बर्बर समझे जानेवाले लोगों को भी अपने ही परिवार के सदस्य की भाँति गले लगाना ही नहीं सीखे हैं, अपितु इसने मानव जाति के सम्पूर्ण इतिहास को एक वास्तविक रूप में प्रकट कर दिखाया है, जो पहले नहीं हो पाया था।

भाषाविज्ञान के द्वारा हमने अबतक जो निष्कर्ष निकाले हैं वे संस्कृत की सहायता के बिना कदापि नहीं प्राप्त किये जा सकते थे। आज हमारा इतिहास का यह अध्ययन- प्रत्न मानव को – 'अपने पूर्व को, अपने वास्तविक पूर्व को पहचानिये' – इस फ्रेंच उक्ति को क्रियान्वित कर सकने योग्य बनाता है। इस प्रकार मनुष्य इस विश्व में अपना वास्तविक स्थान निश्चित कर पाता है और यह जान लेता है कि उसने अपनी जीवन यात्रा कहाँ से आरंभ की थी, उसे कौन-सा मार्ग अपनाना और कहाँ पहुँचना है।

हम सब पूर्व से आये हैं। हमारे जीवन में जो भी कुछ अत्यधिक मूल्यवान है, वह हमें पूर्व से मिला है और पूर्व को पहचान लेने से ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को जिसने इतिहास की वास्तविक शिक्षा का कुछ लाभ उठाया है, भले ही वह प्राच्य-विद्या-विशारद न भी हो तो भी यह अनुभव अवश्य होगा कि वह नानाविध स्मृतियों से भरे अपने पुराने घर की ओर जा रहा है।

अगले वर्ष जब आप लोग भारत के तट पर पहुँचेंगे तो बजाय इसके कि आपका दिल बैठने लगे, मैं चाहता हूँ कि आपमें से प्रत्येक को ठीक वैसा ही अनुभव हो सके जैसा कि आज से सौ वर्ष पहले सर विलियम जोन्स को उस समय हुआ था जब उन्होंने इंग्लैंड से आरम्भ की हुई अपनी लम्बी समुद्र यात्रा की समाप्ति पर क्षितिज में प्रकट होते हुए भारत के तट का दर्शन किया था। सुनिये, उन्हीं के शब्दों में – "जिस भारत यात्रा की ललक मेरे मन में उठ रही थी, पिछले 1783 के अगस्त में उस देश के लिए मैं समुद्र यात्रा कर रहा था कि एक दिन सन्ध्या के समय दिनभर में देखे गए दृश्यों की जाँच-पड़ताल करते हुए मैंने पाया कि भारत अब ठीक

हमारे सामने था । फारस या ईरान हमारे बाईं ओर था तथा अरब सागर से आती हुई ठण्डी हवाएँ हमारे जहाज के पिछले भाग से टकरा रही थीं । एशिया के सुविस्तीर्ण क्षेत्रों से चारों ओर से घिरी ऐसी श्रेष्ठ रंगभूमि के मध्य अपने आपको पाकर मुझे जिस आनन्द का अनुभव हुआ, वह वस्तुतः अनिर्वचनीय है । एशिया की यह भूमि नानाविध ज्ञान-विज्ञान की धात्री, आनन्ददायक ललित तथा उपयोगी कलाओं की जननी, एक से एक बढ़कर शानदार कार्यकलापों की दृश्यभूमि, मानव प्रतिभा के उत्पादन के लिए अत्यन्त उर्वर क्षेत्र तथा धर्म, राज्य, सरकारों, कानून या विधि-संहिता, रीति-रिवाज, परम्पराओं, भाषा, लोगों के रंग रूप और आकार-प्रकार आदि की दृष्टि से अपनी अत्यधिक विविधता के कारण सदा से सर्वत्र सम्मान की दृष्टि से देखी जाती रही है ।

मैं यह कहे बिना नहीं रह सका कि कितना अधिक विशाल और महत्त्वपूर्ण क्षेत्र अभी तक अनदेखा ही रह गया है और कितने बड़े व ठोस लाभ अभी तक प्राप्त नहीं किए जा सके हैं !''

भारत को सर विलियम जोन्स जैसे अभी न जाने कितने स्वप्नदर्शियों की आवश्यकता है । जब अपने जहाज के डेक पर अकेले खड़े 37 वर्ष के सर जोन्स ने देखा था कि सूर्य अपरान्त सागर में डूब रहा है, तो उनके पीछे इंग्लैंड की सुमधुर स्मृतियाँ तथा उनके सामने भारत की आशा जगमगा रही थी । उन्हें ईरान तथा उसके प्राचीन सम्राट मानो प्रत्यक्ष रूप में उपस्थित लग रहे थे, अरब सागर की शीतल मन्द समीर के झोंके उन्हें झुला रहे थे । ऐसे स्वप्नदर्शी ही यह समझ सकते हैं कि अपने स्वप्नों को साकार और अपनी कल्पनाओं को वास्तविकता में परिणत कैसे किया जा सकता है ।

और जो बात या स्थिति आज से सौ वर्ष पहले थी, आज भी वैसी ही है । या यूँ कहें कि आज भी वैसी हो ही सकती है । यदि आप लोग चाहें तो भारत के बारे में वैसे ही सुनहरे सपने देख सकते हैं और भारत पहुँचने के बाद एक से बढ़कर एक शानदार काम भी कर सकते हैं । आप लोग विश्वास रखें कि यद्यपि सर विलियम जोन्स ने कलकत्ता पहुँचने के बाद से अब तक प्राच्य देशों के इतिहास और साहित्य के क्षेत्र में एक से बढ़कर एक शानदार बड़ी-बड़ी अनेक विजयें प्राप्त की हैं, तथापि किसी भी नए सिकन्दर को यह सोचकर निराश नहीं हो जाना चाहिए कि गंगा और सिन्धु के पुराने मैदानों में अब उसके लिए विजय करने को कुछ भी शेष नहीं रहा ।

◆ ◆ ◆

बोध और अभ्यास

पाठ के साथ

1. समस्त भूमंडल में सर्वविद् सम्पदा और प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण देश भारत है । - लेखक ने ऐसा क्यों कहा है ?
2. लेखक की दृष्टि में सच्चे भारत के दर्शन कहाँ हो सकते हैं और क्यों ?
3. भारत को पहचान सकने वाली दृष्टि की आवश्यकता किनके लिए वांछनीय है और क्यों ?
4. लेखक ने किन विशेष क्षेत्रों में अभिरुचि रखने वालों के लिए भारत का प्रत्यक्ष ज्ञान आवश्यक बताया है ?
5. लेखक ने वारेन हेस्टिंग्स से संबंधित किस दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटना का हवाला दिया है और क्यों ?
6. लेखक ने नीतिकथाओं के क्षेत्र में किस तरह भारतीय अवदान को रेखांकित किया है ?
7. भारत के साथ यूरोप के व्यापारिक संबंध के प्राचीन प्रमाण लेखक ने क्या दिखाए हैं ?
8. भारत की ग्राम पंचायतों को किस अर्थ में और किनके लिए लेखक ने महत्त्वपूर्ण बतलाया है ? स्पष्ट करें ।
9. धर्मों की दृष्टि से भारत का क्या महत्त्व है ?
10. भारत किस तरह अतीत और सुदूर भविष्य को जोड़ता है ? स्पष्ट करें ।
11. मैक्समूलर ने संस्कृत की कौन-सी विशेषताएँ और महत्त्व बतलाये हैं ?
12. लेखक वास्तविक इतिहास किसे मानता है और क्यों ?
13. संस्कृत और दूसरी भारतीय भाषाओं के अध्ययन से पाश्चात्य जगत् को प्रमुख लाभ क्या-क्या हुए ?
14. लेखक ने भारत के लिए नवागंतुक अधिकारियों को किसकी तरह सपने देखने के लिए प्रेरित किया है और क्यों ?
15. लेखक ने नया सिकंदर किसे कहा है ? ऐसा कहना क्या उचित है ? लेखक का अभिप्राय स्पष्ट कीजिए ।

पाठ के आस-पास

1. जनरल कनिंघम कौन थे और उनका क्या महत्त्व है ? शिक्षक से मालूम करें ।
2. विलियम जोंस के बारे में अधिक-से-अधिक जानकारी इकट्ठी कर मित्रों से उन पर चर्चा करें ।
3. सिकंदर कौन थे ? भारत के प्रसंग में उनका किस तरह उल्लेख होता है ? इतिहास के शिक्षक से जानकारी प्राप्त करें ।
4. धर्मसूत्र और समयाचारिक सूत्र क्या है ? कुछ प्रमुख सूत्रों के नाम मालूम करें ।
5. मैक्समूलर के जीवन और कार्यों के बारे में जानकारी एकत्र कर अपने शिक्षक से चर्चा करें ।

6. पाठ में आए ऐतिहासिक जातियों और देशों के सूचक शब्दों को चुनकर उनके अर्थ मालूम करें।

भाषा की बात

1. **निम्नांकित वाक्यों से विशेष्य और विशेषण पद चुनें –**
   - (क) उत्कृष्टतम उपलब्धियों का सर्वप्रथम साक्षात्कार
   - (ख) प्लेटो और काण्ट जैसे दार्शनिकों का अध्ययन करनेवाले हम यूरोपियन लोग
   - (ग) अगला जन्म तथा शाश्वत जीवन
   - (घ) दो-तीन हजार वर्ष पुराना ही क्यों, आज का भारत भी
   - (ङ) भूले-बिसरे बचपन की मधुर स्मृतियाँ
   - (छ) लाखों-करोड़ों अजनबियों तथा बर्बर समझे जानेवाले लोगों को भी
2. 'अग्रजा' की तरह 'जा' प्रत्यय जोड़कर तीन-तीन शब्द बनाएँ –
3. **निम्नलिखित उपसर्गों से तीन-तीन शब्द बनाएँ –**
   प्र, निः, अनु, अभि, वि
4. वास्तविक में 'इक' प्रत्यय है। 'इक' प्रत्यय से पाँच शब्द बनाएँ।

शब्द निधि

अवलोकन : देखना, प्रतीति करना, महसूस करना
अवगाहन : स्नान, गहरे डूबकर समझने की कोशिश करना
वांछनीय : चाहने योग्य, कामना करने योग्य
नृवंश विद्या : नृतत्त्व शास्त्र, मानव शास्त्र
परिमाण : मात्रा
दारिस : मुद्रा का एक प्राचीन प्रकार
प्रेषित : भेजा हुआ
दैवत विज्ञान : देव विज्ञान
प्रत्नयुग : प्रागैतिहासिक युग, प्राचीन युग
अनुरूपता : समानता, सादृश्य
क्षय : छीजन, विनाश
अपरिहार्य : जिसे छोड़ा न जा सके, अनिवार्य
क्षीयमाण : नष्ट होता हुआ
मसला : मुद्दा, विषय
सदाशयता : उदारता, भलमनसाहत
सर्वातिशायी : जिसमें सारी चीजें समाहित हो जायें
विद्यमान : वर्तमान, उपस्थित
अहेतुकवाद : ऐसा सिद्धांत जिसमें हेतु या कारण की पहचान न हो सके
सर्वथा : पूरी तरह से
ज्ञातव्य : जानने योग्य
सारभूत : सार या निष्कर्ष कहा जाने योग्य, आधारभूत
अजनबी : अपरिचित, अज्ञात
बर्बर : जंगली, असभ्य
सुविस्तीर्ण : अतिविस्तृत, खुशफैल, पूरी तरह से फैला हुआ
अनिर्वचनीय : जिसकी व्याख्या न की जा सके, वाणी के परे
धात्री : पालन-पोषण करनेवाली, धारण करनेवाली
अपरांत : पश्चिमी
परिणत : परिवर्तित, जिसका परिणाम सामने आ गया हो
प्राच्य : पूर्वी (पाश्चात्य का विलोम), यहाँ भारतीय के अर्थ में